NEERAJ®

Serving Education for Last 40 Years

M.H.I. - 104

भारत में राजनैतिक संस्चनाएँ

(Political Structures in India)

Chapter Wise Reference Book
Including Many Solved Sample Papers

Based on

I.G.N.O.U.

& Various Central, State & Other Open Universities

By: *Sanjay Jain*

NEERAJ PUBLICATIONS
(Publishers of Educational Books)

Mob.: 8510009872, 8510009878 E-mail: info@neerajbooks.com
Website: www.neerajbooks.com

MRP ₹ 350/-

Content

भारत में राजनैतिक संरचनाएँ
(Political Structures in India)

Sample Question Paper-1 (Solved) 1
Sample Question Paper-2 (Solved) 1
Sample Question Paper-3 (Solved) 1
Sample Question Paper-4 (Solved) 1

S.No.	Chapterwise Reference Book	Page

प्रारंभिक राज्य संरचना

1. राज्य से पूर्व से राज्य तक (Pre-State to State) 1
2. क्षेत्रीय राज्यों से साम्राज्य तक (Territorial States to Empire) 9
3. दूसरी सदी बी.सी.ई. से तीसरी सदी सी.ई. तक की राजनैतिक प्रणालियाँ 15
(Polities from 2nd Century BCE to 3rd Century CE)
4. प्राचीन भारत में गैर-राजशाही राजनीतिक संरचनाएँ 20
(Non-monarchical Political Formations in Ancient India)
5. तीसरी शताब्दी से छठी शताब्दी सी.ई. तक की राजनैतिक प्रणालियाँ 28
(Polities from 3rd Century CE to 6th Century CE)

भारत में राज्य : 7वीं-13वीं सदी सी.ई.

6. उत्तर भारत में प्रारंभिक मध्यकालीन राजनैतिक पद्धतियाँ : 7वीं-13वीं सदी सी.ई. 39
(Early Medieval Polities in North India: 7th to 13th Centuries CE)
7. प्रायद्वीपीय भारत में प्रारंभिक मध्यकालीन राजनैतिक पद्धतियाँ : 6वीं-8वीं सदी सी.ई. 48
(Early Medieval Polities in Peninsular India: 6th to 8th Centuries CE)
8. प्रायद्वीपीय भारत में प्रारंभिक मध्यकालीन राजनैतिक पद्धतियाँ : 8वीं-13वीं सदी सी.ई. 53
(Early Medieval Polities in Peninsular India: 8th to 13th Centuries CE)
9. हिमालय क्षेत्र में राजनैतिक व्यवस्थाएँ : मध्य व पश्चिमी हिमालय 58
(Polities in Himalayan Region: Central and Western Himalayas)
10. हिमालय क्षेत्र में राजनैतिक व्यवस्थाएँ : पूर्वी हिमालय 65
(Polities in Himalayan Region: Eastern Himalayas)

भारत में राज्य : लगभग 1300-1800 सी.ई.

11. दिल्ली सल्तनत (Delhi Sultanate) 70
12. राजपूत (Rajputs) 74
13. उत्तर-पूर्वी भारत में राजव्यवस्थाएँ (Polities of North-Eastern India) 82

14. विजयनगर, बहमनी और दूसरे राज्य (Vijayanagara, Bahamani and Other Kingdoms)..... 91
15. मुगल राज्य (The Mughal State)..... 97
16. मराठा राज्य (The Maratha State)..... 103
17. मराठा प्रशासनिक तंत्र (Maratha Administrative System)..... 113

18वीं शताब्दी के राज्य

18. अठारहवीं शताब्दी की राज्यव्यवस्थाएँ–I (Polities of the Eighteenth Century-I)..... 117
19. अठारहवीं शताब्दी की राज्यव्यवस्थाएँ–II (Polities of the Eighteenth Century-II)..... 126

यूरोपीय कंपनियाँ, उपनिवेशवाद व सम्राज्य

20. औपनिवेशिक शक्तियाँ : पुर्तगाली, डच और फ्रांसीसी..... 134
(Colonial Powers: Portuguese, Dutch and French)
21. ब्रिटिश औपनिवेशिक राज्य (The British Colonial State)..... 141
22. राजसी राज्य या रियासतें (Princely States)..... 149

प्रशासनिक एवं संस्थागत संरचनाएँ–I

23. प्रायद्वीपीय भारत में प्रशासनिक एवं संस्थागत संरचनाएँ..... 155
(Administrative and Institutional Structures in Peninsular India)
24. उत्तर भारत में प्रशासनिक एवं संस्थागत संरचनाएँ..... 162
(Administrative and Institutional Systems in North India)
25. विधि एवं न्यायिक पद्धतियाँ (Law and Judicial Systems)..... 169

प्रशासनिक एवं संस्थागत संरचनाएँ–II

26. दिल्ली सल्तनत–II (The Delhi Sultanate-II)..... 173
27. विजयनगर, बहमनी और दूसरे राज्य–II (Vijayanagara, Bahamani and Other Kingdoms-II)..... 179
28. मुगल साम्राज्य (The Mughal Empire)..... 184

उपनिवेश व साम्राज्य

29. ब्रिटिश राज की विचारधाराएँ (Ideologies of the British Rule)..... 189
30. औपनिवेशिक शासन (Colonial Governance)..... 195
31. संसाधनों का औपनिवेशिक नियंत्रण (Colonial Control of Resources)..... 203
32. औपनिवेशिक हस्तक्षेप का विस्तार : शिक्षा और समाज..... 207
(Colonial Intervention: Education and Society)
33. औपनिवेशिक शासन के अंतर्गत उत्तर–पूर्वी भारत (North-East India Under Colonial Rule)..... 211
34. स्वतंत्रता व जनतांत्रिक राज–व्यवस्था की स्थापना..... 218
(Independence and Establishment of Democratic Polity)

Sample Preview of the Solved Sample Question Papers

Published by:

NEERAJ PUBLICATIONS

www.neerajbooks.com

Sample

QUESTION PAPER - 1

(Solved)

भारत में राजनैतिक संरचनाएँ
(Political Structures in India)

M.H.I.-104

समय : 3 घण्टे] *[अधिकतम अंक : 100*

नोट : कुल **पाँच** प्रश्नों के उत्तर दीजिए। सभी प्रश्नों के अंक समान हैं।

प्रश्न 1. पहली सहस्राब्दी के मध्य के पुरालेखों के आधार पर उस काल की उन राजनैतिक प्रणालियों का वर्णन कीजिए, जो मुख्य रूप से कृषि पर आधारित थीं और जो विंध्याचल के दोनों तरफ फैली हुई थीं।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-5, पृष्ठ-33, प्रश्न-3

प्रश्न 2. 18वीं शताब्दी में ब्रिटिश भारत और चीन के बीच अफीम के व्यापार के विकास को समझने में ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा भारत की क्षेत्रीय विजय किस प्रकार महत्वपूर्ण है?

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-19, पृष्ठ-131, प्रश्न-3

प्रश्न 3. आरम्भिक ऐतिहासिक काल में तमिलकम में उभरे मुखियातंत्रों की प्रकृति की विवेचना कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-1, पृष्ठ-3, प्रश्न-2

प्रश्न 4. औपनिवेशिक सैन्य व्यवस्था की विशेषताओं की साम्राज्यवादी नियंत्रण के साधन के रूप में विवेचना कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-21, पृष्ठ-142, प्रश्न-1

प्रश्न 5. छठी से आठवीं शताब्दी ई. के बीच प्रायद्वीपीय भारत में राजनैतिक प्रक्रियाओं की प्रकृति का विश्लेषण कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-7, पृष्ठ-49, प्रश्न-2

प्रश्न 6. मौर्य शासकों के अधीन प्रशासनिक व्यवस्था की प्रमुख विशेषताओं की विवेचना कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-24, पृष्ठ-162, प्रश्न-1

प्रश्न 7. राजपूतों की राजनीतिक और सैन्य प्रणाली की महत्वपूर्ण विशेषताओं पर चर्चा करें।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-12, पृष्ठ-78, प्रश्न-7

प्रश्न 8. भारतीय सामाजिक-राजनैतिक व्यवस्था की प्राच्यवादी और इवेन्जिलवादी समझ पर चर्चा कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-29, पृष्ठ-189, प्रश्न-1

प्रश्न 9. पूर्वी हिमालय से आप क्या समझते हैं? हमारे लिए पूर्वी हिमालय को वर्तमान राज्य की सीमाओं से परे देखना क्यों महत्वपूर्ण हैं?

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-10, पृष्ठ-66, प्रश्न-1

प्रश्न 10. किन्हीं दो विषयों पर टिप्पणी कीजिए–

(क) मौर्य राज्य

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-2, पृष्ठ-11, प्रश्न-2

(ख) दिल्ली सल्तनत में राज्य की प्रकृति

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-11, पृष्ठ-71, प्रश्न-2

(ग) पुर्तगाली सामुदायिक साम्राज्य

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-20, पृष्ठ-135, प्रश्न-2

(घ) औपनिवेशिक एवं राष्ट्रवादी विरासत

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-34, पृष्ठ-218, प्रश्न-1

■■

Sample

QUESTION PAPER - 2

(Solved)

भारत में राजनैतिक संरचनाएँ
(Political Structures in India)

M.H.I.-104

समय : 3 घण्टे] *[अधिकतम अंक : 100*

नोट : कुल **पाँच** प्रश्नों के उत्तर दीजिए। सभी प्रश्नों के अंक समान हैं।

प्रश्न 1. आठवीं से बारहवीं शताब्दी ई. के बीच प्रायद्वीपीय भारत में स्थानीय स्तर के राजनैतिक संगठन की प्रकृति पर चर्चा कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-8, पृष्ठ-53, प्रश्न-1

प्रश्न 2. "उत्तर भारत में प्रारम्भिक वैदिक काल तथा परवर्ती वैदिक काल भू-सीमांकित राज्यों की स्थापना की ओर ले जाने वाला संक्रमण काल था।" इस कथन की विवेचना कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-2, पृष्ठ-13, प्रश्न-2

प्रश्न 3. पेशवाओं के अधीन होने वाले प्रशासनिक परिवर्तनों पर विचार कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-17, पृष्ठ-115, प्रश्न-3

प्रश्न 4. भारत में अंग्रेजी शिक्षा की प्रगति में मैकाले के प्रारूप के महत्त्व पर चर्चा कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-32, पृष्ठ-207, प्रश्न-1

प्रश्न 5. क्या आप फ्रांसीसियों को भारत में औपनिवेशीकरण की अगुवाई करने वाला मानते हैं? स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-20, पृष्ठ-134, प्रश्न-1

प्रश्न 6. कामरूप साम्राज्य पर शासन करने वाले राजवंशों की चर्चा कीजिए और इस राज्य के भौगोलिक विस्तार का वर्णन कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-10, पृष्ठ-67, प्रश्न-3

प्रश्न 7. मुगलों के अन्तर्गत मंसबदारी की कार्यशैली पर चर्चा कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-28, पृष्ठ-184, प्रश्न-1

प्रश्न 8. अहोम साम्राज्य और अन्य राजनीतिक शक्तियों के बीच संघर्षों पर प्रकाश डालिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-13, पृष्ठ-84, प्रश्न-1

प्रश्न 9. प्राचीन भारत में प्रचलित न्यायिक व्यवस्था की विवेचना करें।

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-25, पृष्ठ-170, प्रश्न-2

प्रश्न 10. किन्हीं दो विषयों पर टिप्पणी कीजिए–

(क) दक्षिण भारत की राजप्रणाली

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-5, पृष्ठ-30, प्रश्न-2

(ख) मुगलों का प्रभुसत्ता सिद्धांत

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-15, पृष्ठ-97, प्रश्न-1

(ग) बहमनी प्रशासनिक ढाँचा

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-27, पृष्ठ-181, प्रश्न-2

(घ) भूमि बंदोबस्त

उत्तर–संदर्भ–देखें अध्याय-31, पृष्ठ-203, प्रश्न-1

■■

Sample Preview of The Chapter

Published by:

NEERAJ PUBLICATIONS

www.neerajbooks.com

भारत में राजनैतिक संरचनाएँ
(Political Structures in India)

राज्य से पूर्व से राज्य तक
(Pre-State to State)

1

परिचय

भारत की राजनैतिक संरचनाओं का अध्ययन एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण और कठिन विषय है। राजनैतिक प्रणालियाँ विभिन्न संघटक तत्त्वों से जुड़ी होती हैं, जैसे–प्रशासनिक, संस्थागत व्यवस्था आदि। इस अध्याय में इन संघटक तत्त्वों के अध्ययन पर भी बल दिया गया है। भारत में राज्यों का जन्म किस प्रकार हुआ, इस बात का पता लगाना अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण विषय है और साथ ही इस संदर्भ में विद्वानों के बीच पर्याप्त मतभेद व्याप्त है। इस अध्ययन से हमें राज्य से पहले की और उसके बाद की प्रणाली, अविकसित तथा विकसित प्रणाली, अपरिपक्व तथा परिपक्व प्रणाली के बीच के भेदों को समझने में मदद मिलेगी। प्राचीन भारतीय राज्य प्रणाली में वंशानुगत राज्य अथवा राजतंत्र की व्यवस्था प्रचलित थी। लेकिन इस काल में राजतंत्र के अलावा गण संघ और पूर्ण रूप से विकसित राज्यतंत्र भी थे, जो एक महत्त्वपूर्ण बात है। भारत के प्राचीन राज्यों की संरचना के पीछे कृषि तथा सामाजिक भेदभाव आदि जैसी सामाजिक-आर्थिक संरचनाओं का हाथ था। भारत के प्राचीन राज्यों की संरचना के स्वरूप को निर्धारित करने में ब्राह्मणवाद, वर्णवाद आदि विचारधाराओं की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। अर्थशास्त्र जैसे प्राचीनतम साहित्य में प्राचीन राज्य व्यवस्था में प्रचलित राजा, कोष, सैन्यबल आदि विशेषताओं का वर्णन मिलता है। राज्य की इन विशेषताओं का चलन आधुनिक राज्य प्रणाली में भी देखा जा सकता है, जिन्हें हम संस्थागत या प्रशासनिक व्यवस्था के रूप में वर्गीकृत कर सकते हैं। दिल्ली में सल्तनत और मुगल राज्य की स्थापना के परिणामस्वरूप राज्य प्रणाली में बहुत सारी प्रशासनिक विशेषताओं का जन्म हुआ। इसके अतिरिक्त अंग्रेजों के शासन और औपनिवेशिक राज्य की स्थापना के कारण भी राजनैतिक व्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की पाश्चात्य राजनैतिक अवधारणाओं एवं संरचनाओं का विकास हुआ।

अध्याय का विहंगावलोकन

राज्यों का अध्ययन प्राचीन काल से ही एक महत्त्वपूर्ण विषय माना जाता रहा है। प्राचीन काल के भारत की राजनैतिक संरचनाओं का अध्ययन करने से पता चलेगा कि उस समय राज्य का जन्म किस प्रकार हुआ। इस अध्याय में मूलत: राज्य के विकास और उसकी संरचना के अध्ययन पर बल दिया गया है। साथ ही राजनैतिक प्रणाली और राज्य से पहले के समाजों के बीच के अन्तर को भी जानने का प्रयास किया गया है। अत: इस अध्याय में राज्य की विशेषताओं का अध्ययन करने के साथ-साथ राज्य और उसके पहले के समाजों का अन्तर भी बताया गया है।

इस अध्याय में प्राचीन भारत में राज्य से पूर्व से राज्य में संक्रमण किस प्रकार हुआ, इसकी चर्चा की गई है। यह माना जाता है कि हड़प्पा के समय में राज्य का अस्तित्व कायम था। किन्तु पर्याप्त सामग्री उपलब्ध न होने के कारण हड़प्पा राज्य की प्रकृति के विषय में जानकारी प्राप्त करना मुश्किल है। प्रारम्भिक वैदिक युग वंश-आधारित समाज पर कायम था। परवर्ती वैदिक युग में वंश समाज और गण संघ जैसी अपरिपक्व राजनैतिक प्रणाली और राजतंत्र जैसी परिपक्व राजनैतिक प्रणाली के मध्य की संक्रमण काल की अवस्था पाई जाती है। दक्षिण भारत में कबीलाई संगठन की विशेषता वाली राजनैतिक संरचना विद्यमान थी। सामाजिक-आर्थिक एवं राजनीतिक प्रणाली में विभेदीकरण और स्तरीकरण नहीं था। अत: हम कह सकते हैं कि यह राज्य से पूर्व की सामाजिक संरचना थी।

प्रारम्भिक भारत में राज्य के संक्रमण सम्बन्धी हमें जो भी जानकारी प्राप्त हुई है, वह विद्वानों के वर्षों के अध्ययन और शोध पर आधारित है। उस समय के राज्य की गूढ़ और जटिल संरचनाओं की जानकारी हमें इसके अध्ययन से प्राप्त होती है। सैद्धान्तिक रूप में राज्य कोई सार्वभौम अथवा सर्वव्यापी संस्था नहीं है, जो किसी भी ऐतिहासिक काल के समाज में पाई जाती हो। राज्य मात्र विभेदपूर्ण अर्थव्यवस्था व स्तरीय राज्य समाज में पाई जाती है। इसके फलस्वरूप निम्नलिखित अवधारणाओं का विकास हुआ है–

अस्तरीकृत समाज पूर्व राज्य समाज है, राज्य का जन्म बाहर से नहीं हुआ है, राज्य अनिवार्य रूप से स्वत: ही अस्तित्व में आया है, राज्य न तो विलीन होता है और न ही प्रत्यारोपित। गौण राज्य संरचना की अवधारणा भी गलत है। अब सबसे महत्त्वपूर्ण विचारणीय बात यह है कि राज्य की उपस्थिति या अनुपस्थिति के विषय में पूर्वानुमान क्या सामाजिक संरचना की प्रकृति से निर्धारित होता है। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से वर्गीकृत समाजों में राजनैतिक प्रक्रियाओं के संस्थागत प्रतिफल के रूप में राजशाही और साम्राज्य के रूप में राज्य उत्पन्न हुए थे। इसी कारण प्राचीन काल के राज्य वंशानुगत शासन या राजतंत्र के प्रतिरूप थे और अगर हम राज्य संरचना के इतिहास का अध्ययन करें, तो हमें पता चलता है कि कबीलाई तंत्र राज्य के रूप में परिवर्तित हो गया है।

यह सर्वमान्य बात है कि उत्तर भारत में राज्य के पहले के राज्य में जो संक्रमण हुआ था, वह सहस्राब्दी ई.पू. में हुआ था। यह परिवर्तन दक्षिण भारत में बहुत बाद में छठी सदी ईसवी में हुआ था। विजय सिद्धान्त के अध्ययन से यह पता चलता है कि आर्यों को जब विजय प्राप्त हो गई और जब उनका अधिकार स्थानीय मूल समाज पर स्थापित हो गया तब राज्य अस्तित्व में आया। अगर हम आंतरिक स्तरीकरण के सिद्धान्तों का अध्ययन करें तो पता चलता है कि जातीय संरचना भी स्तरीकरण की ही प्रणाली है और इसके शासक वर्ग क्षत्रिय थे और 'विश' खेतिहर थे। जहाँ तक उत्तर भारत में राज्यों के उदय का प्रश्न है, वहाँ राज्यों का जन्म समाज में क्षत्रियों को ऊँचा स्थान प्राप्त होने के कारण हुआ। इस कारण राज्य प्रणाली में संक्रमण के लिए स्तरीकरण एक महत्त्वपूर्ण घटना है।

दक्षिण भारत में सामाजिक स्तरीकरण और संरचना की प्रकृति अलग प्रकार की थी। जब स्तरीकरण में मतभेद और तनाव पैदा होते हैं, तब उनके समाधान और नियंत्रण के लिए 'शक्ति' की आवश्यकता होती है। राज्य की उत्पत्ति के पीछे कृषि अर्थव्यवस्था भी एक महत्त्वपूर्ण कारक है। इसके अतिरिक्त राज्य की संरचना के विकास में जनसंख्या वृद्धि और सामाजिक सीमाबद्धता के योगदान को भी नकारा नहीं जा सकता। राज्य संरचना का दूसरा महत्त्वपूर्ण घटक सामाजिक एवं सांस्कृतिक विविधता है। इसी तरह राज्य की उत्पत्ति में व्यापार तथा नगरीय केन्द्रों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। राजनैतिक प्रणाली के अन्तर्गत एक क्षेत्र पर राजनैतिक शक्ति का अधिकार होता है, जिसके कार्यों का संचालन वह अपने अधिकारियों के द्वारा करवाती है। राज्य को विभिन्न प्रबंधन कार्यों का सम्पादन करना होता है जिसके लिए संसाधनों की आवश्यकता होती है। इन संसाधनों के लिए राज्य को राजस्व का संकलन करना होता है। इस प्रकार, उपर्युक्त अध्ययन के आधार पर हम कह सकते हैं कि सामाजिक तथा आर्थिक विभेदीकरण राज्य संरचना प्रक्रिया के साथ अनिवार्य रूप से संलग्न है।

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1. उस प्रक्रिया की व्याख्या कीजिए, जिसके द्वारा परवर्ती वैदिक काल में सामाजिक एवं राजनैतिक सम्बन्ध जटिल हो गए थे।

उत्तर–परवर्ती वैदिक काल के ग्रन्थों के अध्ययन से यह पता चलता है कि इस काल में सामाजिक एवं राजनैतिक सम्बन्ध बहुत ही जटिल हो गए थे। उस काल के पुरोहितों तथा उनके संरक्षकों ने प्रसिद्ध राजसूय, वाजपेय तथा अश्वमेध जैसे जटिल अनुष्ठानों के द्वारा उन्हें नियंत्रित करने के प्रयास किए थे। ऋग्वेद में वर्ण वर्गों का उल्लेख नहीं है, जो हमेशा ही एक चर्चा का विषय रहा है। ठीक इसके विपरीत परवर्ती वैदिक ग्रन्थों में वर्णों के बीच के आदर्श सम्बन्धों, मुख्य रूप से प्रथम तीन वर्णों की चर्चा की गई है। इस काल में जहाँ एक ओर ब्राह्मण और क्षत्रिय राजाओं के बीच में प्रतिस्पर्धा और तनाव व्याप्त था तो दूसरी ओर एक-दूसरे की आवश्यकता की अनिवार्यता भी अनुभव की गई।

संघर्ष का एक मुख्य कारण अनुष्ठानों में योगदान को लेकर था। एक ओर जहाँ ब्राह्मण इन कार्यों के विशेषज्ञ तथा पवित्र भाषा और नियमों के ज्ञाता होने के कारण अपने ऊँचे होने का दावा करते थे, वहीं दूसरी ओर क्षत्रिय इन अनुष्ठानों के संरक्षक होने के कारण ब्राह्मणों की श्रेष्ठता को स्वीकार करने को तैयार में नहीं थे। यहाँ पर एक और जटिल समस्या थी कि ब्राह्मण अपने को ऊँचे और प्रतिष्ठित कुल का होने के कारण अपने को क्षत्रियों से श्रेष्ठ मानते थे, जबकि क्षत्रियों का यह कहना था कि हम दानकर्त्ता एवं दानदाता होने के कारण श्रेष्ठ हैं। दान लेने वाले ब्राह्मण श्रेष्ठ कैसे हो सकते हैं? इन्हीं कारणों से भौतिक संसाधनों में भागीदारी का भी जटिल प्रश्न उत्पन्न हो गया। ब्राह्मणों की दृष्टि में धन-सम्पत्ति का अधिक महत्त्व था जिसमें सोना, चाँदी, पीतल, मवेशी, वस्त्र, स्त्री एवं पुरुष दास, दक्षिणा आदि चीजें सम्मिलित थीं। उदार राजाओं की खूब प्रशंसा होती थी, लेकिन सबसे जटिल समस्या यही थी, जिसका समाधान करना कठिन था कि दान देने वाला क्षत्रिय से दान देने वाले ब्राह्मण कैसे श्रेष्ठ हो सकता है? इतने संघर्ष और तनाव के बाद भी ब्राह्मण और क्षत्रियों के बीच सुमधुर सम्बन्ध कायम थे, क्योंकि दोनों ही एक-दूसरे पर निर्भरता की अनिवार्यता को अच्छी तरह समझते थे। हालांकि दोनों के स्वार्थ भिन्न-भिन्न थे लेकिन विस्तृत अनुष्ठानों के लिए राजाओं का पुरोहितों पर निर्भर रहना उनकी अनिवार्यता थी। इसके द्वारा ही राजा के दावों को न्यायसंगत करार दिया जाता था तथा उसे वैधता प्रदान की जाती थी। राजसूय जैसे विस्तृत अनुष्ठानों के बाद पुरोहित द्वारा यह घोषणा की जाती थी कि यजमान अब राजा बन गए हैं। इसके बाद ही लोग राजा के लिए भी अनेक सुअवसरों पर भेंट अर्पित करते थे। इस प्रकार, एक पवित्र वातावरण का निर्माण करने में पुरोहितों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती थी।

इस काल में एक समुदाय विशेष के लिए 'विस' शब्द का प्रयोग किया जाता था। विस शब्द को वैश्य शब्द का ही एक घटक माना जाता है, जिसमें परिवर्तन करना सबसे महत्त्वपूर्ण बात थी। राजसूय तथा अश्वमेध जैसे प्रमुख अनुष्ठानों के अवसरों पर यजमान को अभिषेक के द्वारा पवित्र करके विस का राजा घोषित कर दिया जाता था। ब्राह्मण तथा क्षत्रिय जैसी विशिष्ट जातियों से अलग एक अविशिष्ट वर्ग के लिए 'विस' शब्द प्रयोग किया जाता था। विस वर्ग के शोषण को वैध माना जाता था। इसकी विस्तृत जानकारी हमें राजा की विसामत्ता की धारणा से मिलती है, जिसे 'विस-भक्षक' भी कहा जाता है। इससे यह पता चलता है कि विस जो भी संसाधन जुटाता है, राजा उस पर स्वेच्छा से कब्जा कर सकता है। शुरू में विस द्वारा लूटे गए धन में उसे कुछ अंश दे दिया जाता था, लेकिन बाद में

वह हिस्सा भी कर वसूली के नाम पर देना बंद कर दिया गया। राजा के पास भी धन एकत्रित करने के लिए न तो कोई नियोजित उपाय थे और न ही उसके पास कर वसूलने के लिए तरीके थे। क्षत्र और विस के बीच के सम्बन्धों को सुनिश्चित करने के लिए अनुष्ठानों जैसे अवसरों का उपयोग किया जाता था। क्षत्रिय राजाओं के अनुसार विस को उनके अधीन रहकर उनका समर्थन करना चाहिए। मंत्र और अनुष्ठानों का प्रयोग प्रायः इसी कार्य को सुनिश्चित करने के लिए किया जाता था। लेकिन ऐसा भी पाया गया है कि अनुष्ठानों में किए गए प्रयोग हमेशा ही सफल नहीं होते थे। दूसरी ओर यह भी भय बना हुआ था कि कहीं विस क्षत्रियों के अत्याचारों से तंग आकर उन्हें छोड़कर भाग न जाएँ। अगर राजा के अत्यधिक शोषण के कारण राज्य की जनता राज्य से पलायन कर जाए, तो ऐसे में राजा के पास संसाधनों, श्रम एवं सैनिकों का अभाव हो जाएगा।

परवर्ती वैदिक ग्रन्थों की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें राजसूय, अश्वमेध तथा वाजपेय जैसे कठिन अनुष्ठानों की विधि और विधान का विस्तृत वर्णन दिया गया है। अब हमें इस बात पर विचार करना है कि इन धार्मिक अनुष्ठानों का उद्देश्य क्या है? सबसे पहले तो यह एक लंबी प्रक्रिया थी। अश्वमेध यज्ञ की प्रक्रिया यह थी कि इसमें एक सैनिक दस्ते के साथ एक घोड़े को एक वर्ष तक घूमते रहने के लिए खुला छोड़ दिया जाता था और बलि-स्थल पर इस काल में राजा की परम्परा से सम्बन्धित अनुष्ठान और सस्वर पाठ जारी रहता था। दूसरी बात यह थी कि इस प्रकार के विस्तृत अनुष्ठानों के लिए संसाधनों की आवश्यकता होती थी। इन संसाधनों में अनुष्ठान में शामिल लोगों के लिए भोजन और आवास की व्यवस्था, बलि के लिए पशु तथा बलि देने वाले की व्यवस्था पुरोहितों के लिए भोजन तथा दक्षिणा की व्यवस्था आदि आते थे। तीसरी महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि ये सभी अनुष्ठान सत्ता संघर्ष तथा एक प्रथा विशेष से जुड़े होते थे। जैसे कि वाजपेय की सबसे महत्त्वपूर्ण रथ दौड़ होती थी, जिसका अन्त अनिवार्य रूप से यजमान की विजय के साथ ही होता था। इसी तरह राजसूय के दौरान जो जुआ (द्यूत क्रीड़ा) होता था उसमें यजमान की जीत सुनिश्चित होती थी।

इस तरह संघर्षों को प्रथाओं के साथ जोड़ने का कारण यह था कि इसमें परिणाम राजाओं एवं शासकों के पक्ष में पहले से ही तय होता था, जिसे ईश्वरीय कृपा से जोड़ दिया जाता था। चौथी सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि इन अनुष्ठानों के द्वारा संभावित राजा अपनी शक्ति और संसाधनों का प्रदर्शन करता था। यह प्रदर्शन विभिन्न प्रकार से किया जाता था, जैसे राजा को राजसिंहासन पर बैठाना तथा उसका जल से अभिषेक करना आदि। इस प्रक्रिया में जल छिड़कने के लिए जो पात्र होता था, वह भी एक विशेष प्रकार का होता था, जिसके विषय में विस्तृत वर्णन दिया गया है। ज्यादातर वे ही लोग पात्र होते थे, जो पुरोहित या यजमान के रिश्तेदार और विश्वासपात्र होते थे और साथ-ही-साथ वह विस का प्रतिनिधित्व भी करता था। अभिषेक के बाद राजा की विधिवत घोषणा की जाती थी। घोषणा के बाद वह व्यक्ति विस का राजा बन जाता था और उसे 'विस' को खाने तक का अधिकार मिल जाता था, जबकि ब्राह्मण राजा की अधीनता से परे होते थे। इतना ही नहीं राजा की तुलना इन्द्र, प्रजापति, देवताओं–सोम, वरुण देवता आदि से की जाती थी। इन प्रक्रियाओं से यह स्पष्ट है कि राजा को देवता का दर्जा प्रदान कर दिया जाता था, जिससे कि जनता के बीच में उसका आदर और भय व्याप्त रहे। इन धार्मिक अनुष्ठानों का कितना प्रभाव पड़ता था। इसका निर्धारण करना कठिन है। कुछ लोगों पर अनुष्ठानों का प्रभाव पड़ता था, लेकिन कुछ लोगों की प्रतिक्रिया अनभिज्ञ थी। जिन लोगों के द्वारा इन अनुष्ठानों के लिए संसाधन जुटाए जाते थे, उनकी दृष्टि में यह प्रक्रिया संसाधनों की बर्बादी से जुड़ी हुई थी। उपनिषदिक, जैन एवं बौद्ध परम्पराओं में इन अनुष्ठानों की निर्भरता के विषय में विस्तृत चर्चा की गई है, जिससे स्पष्ट होता है कि कुछ क्षत्रिय भी इस प्रकार के धार्मिक अनुष्ठानों के विरोधी थे। दूसरे, इस प्रकार के अनुष्ठान सामाजिक वर्गों की अधीनता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से किए जाते थे। उदाहरण के लिए, अश्वमेध में पशुओं की बलि इसलिए दी जाती थी कि इससे महिलाएँ आदि जैसे सामूहिक समूह अधीनता में रह सकें। हो सकता है कि इन समूहों ने अधीनता स्वीकार करने से इन्कार करके इन अनुष्ठानों से अपने को अलग कर लिया होगा। जो भी हो लेकिन ये अनुष्ठान पूरी तरह समाप्त नहीं हुए। राजनैतिक सत्ता प्राप्त करने और उसे वैधता प्रदान करने के लिए इन अनुष्ठानों का प्रयोग किया जाता रहा।

राजसूय के अन्तर्गत रत्निनामहविंशी नामक एक अभूतपूर्व अनुष्ठान होता था, जिसके अन्तर्गत राजा को दस-बारह पुरुषों तथा स्त्रियों के समूह से जाकर मिलने का अवसर प्राप्त होता था। राजा इन लोगों के घरों में जाकर उन्हें विभिन्न प्रकार के उपहार देकर उनका सहयोग प्राप्त करता था। इस प्रकार के विशिष्ट लोग प्रशासन प्रणाली के केन्द्रबिन्दु हुआ करते थे। इनकी भागीदारी अन्य धार्मिक अनुष्ठानों में होती थी और ये लोग ही अश्वमेध में बलि के अश्व की रक्षा करते थे। इन लोगों को रत्निन कहा जाता था और पुरोहित या ग्रामीण होते थे। इनके अतिरिक्त सारथी या सूत, राजा के विश्वासपात्र साथी जो राजा के अभियानों में शामिल होते थे, तथा विशेष अवसरों पर वीरता की कहानी सुनाने वाले लोग भी शामिल होते थे। इसके अलावा सेनानी, सेनानायक, संसाधनों को जुटाने वाले संगृहित्रों की चर्चा भी ग्रन्थों में उल्लिखित है। ग्रन्थों में शासकों की पत्नियों, जिनमें प्रमुख पत्नी–महिषी, वावाता या प्रिय पत्नी, परित्यक्ता पत्नी का भी उल्लेख मिलता है। इन महिलाओं को राज्य की समृद्धि और उर्वरता का प्रतीक माना जाता था। ये विश्वास सम्बन्ध राजनैतिक सत्ता को भी सुदृढ़ करने का एक तरीका था। कुछ स्त्रियों की धार्मिक अनुष्ठानों, विशेष रूप से बलि अनुष्ठान में विशेष भूमिका होती थी। अगर अश्वमेध में महिषी की उपस्थिति होती थी, तो इसे राज्य में उर्वरता के लिए शुभ माना जाता था।

प्रश्न 2. आरम्भिक ऐतिहासिक काल में तमिलकम में उभरे मुखियातंत्रों की प्रकृति की विवेचना कीजिए।

उत्तर–तमिल वीर साहित्य के अध्ययन से हमें तमिलकम में मुखियातंत्रों की प्रकृति के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। इसका मुख्य कारण यह है कि मुखियातंत्र की संरचना और तमिल वीर साहित्यिक परम्परा का जन्म एक ही साथ तमिलकम में हुआ था। अशोक के शिलालेख जो तीसरी सदी ई.पू. के हैं, में सतियापुत अतियमान के साथ-साथ तमिल क्षेत्र में प्रमुखों, जैसे–चेर, चोल, पाण्ड्य (केरलपुटा, चोड़ा तथा पाण्ड्या) का भी वर्णन है। तमिल

मुखियातंत्र दूसरी सदी ई.पू. से ही अस्तित्व में था, जो तीसरी सदी के अन्त तक कायम था, इस बात की पुष्टि तमिल वीर साहित्यिक रचनाओं, तमिल, ब्राह्मी अभिलेखों तथा यूनानी और रोमन भूगोलशास्त्री (टाल्मी एवं टिलनी) में वर्णित तथ्यों से होती है। मुखियातंत्रों की सामाजिक-आर्थिक प्रक्रिया के पुरातत्त्वीय प्रमाणों से हमें पता चलता है कि पहली ई.पू. सहस्त्राब्दी के मध्य में लोहा प्रयोग करने वाली संस्कृति थी, जिसकी प्रमुख विशेषता महापाषाणी स्मारक हैं। महापाषाणी कब्रों तथा तमिल वीर काव्यों से सम्बन्धित दस्तावेज एक साथ ही पाए गए हैं। इन दोनों संस्कृतियों को एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता है। इस काल में लोग अपने जीवनयापन के लिए समान सांस्कृतिक प्रथाओं द्वारा आपस में एक-दूसरे से जुड़े हुए थे। मुखियातन्त्रों की सत्ता के विभिन्न स्तरों का वर्णन कविताओं में पाया जाता है। इससे यह भी पता चलता है कि सत्ता का बँटवारा छोटे तथा बड़े समूहों के बीच में था। इनमें से कुछ का स्वरूप सरल तथा कुछ का जटिल था। वीर कविताओं से यह भी पता चलता है कि मुखियातन्त्र तीन प्रमुख प्रणालियों–किलार, वेलिर और वेन्तार–में विभाजित थे। किलार प्रमुख वेतार तथा कुरावर वंश के थे, जो आखेटक प्रमुख हुआ करते थे। इसी तरह वेलिर प्रमुख भी वेतार अथवा कुरावर आखेटक प्रमुख हुआ करते थे। कुछ किलार प्रमुखों के नियंत्रण में कृषि भूमि थी और इसी कारण वे साधनसम्पन्न भी थे। किलार खेतिहर बस्तियों में निवास करते थे।

वेलिर प्रमुखों की जो सत्ता थी, वह सबसे पुरानी थी और साथ-ही-साथ वंश परम्परा के प्रति प्रतिबद्ध भी थी। कावेरी तथा वैगाई की घाटियों के बीच एक अर्द्धशुष्क क्षेत्र था जिसमें पारम्परिक पाँच वेल थे। इनमें से एक उरूनको वेल नाम के प्रमुख का वर्णन एक कविता में वेतारकोमन (वेतार प्रमुख) के रूप में मिलता है। प्रमुखों की लम्बी पीढ़ी में इसका स्थान उनचासवीं पीढ़ी में था। कविताओं से ही पता चलता है कि वेलिर प्रमुखों का नियंत्रण कुरिन्जी और मुल्लई नामक चरागाही पहाड़ी भू-क्षेत्रों पर भी था। वे वेतार, इटैयार तथा कुरेवार वंश समूहों के पहाड़ी क्षेत्रों के भी प्रमुख थे। कविताओं से पता चलता है कि ज्वार-बाजरा से सम्पन्न पहाड़ी क्षेत्र के प्रसिद्ध मुखियातंत्र इस प्रकार थे–वेंकटमलाई, कान्तिरमलाई मुतिरामलाई, कुटिरामलाई, परामपूमलाई, पोटिभिमलाई, पयरमलाई, एलिमलाई तथा नाजिलमलाई। केरल का सर्वाधिक प्रसिद्ध पहाड़ी मुखियातंत्र एलिमलाई था। नन्नान, वेतार प्रमुख तथा वंशक्रम के कान्तिरमलाई के प्रमुखों से पारिवारिक सम्बन्ध थे। केरल की दक्षिणी सीमा के पोतिभिमलाई के साथ एक अन्य मुखियातंत्र के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध था। कविताओं में अय की यशगाथा कुरवारपेरूमकन के रूप में की गई है। पोटी-इमलाई पहाड़ी क्षेत्र का शासक एक कुरवार प्रमुख था और इस क्षेत्र में मधु, कटहल, हाथी तथा बंदर आदि पर्याप्त मात्रा में विद्यमान थे। अन्य प्रमुख को मावेल या महान वेल भी कहा जाता था और ये लोग अन्य परिवार से सम्बन्धित थे। जिस शब्द का सम्बन्ध चरवाहों से था और उसके प्रमुखों का यह भी कहना था कि वे वृस्मी कुल से भी सम्बन्ध रखते थे, लेकिन इसका कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है कि वे चरवाहों के प्रमुख थे। परम्पुमलाई पारी का प्रमुख था, ओरी कोल्लिमलाई के प्रमुख थे। काटि ओरि को मारकर उस पहाड़ी क्षेत्र का प्रमुख बन गया। इलिनी कुटिरमलाई और पेकन का प्रमुख था। वनमलाई के प्रमुख का नाम कुमानन तथा मुतिरामलाई का प्रमुख सभी वेतार या कुरावर आखेटक प्रमुखों में सबसे प्रसिद्ध प्रमुख थे। कुछ जगहों पर पहाड़ी प्रमुखों को वेतुवर के नाम से जाना जाता है। लेकिन सभी वेलिर पहाड़ी क्षेत्र के प्रमुख नहीं थे, जैसे कि इलिनी, वेतारू का प्रमुख एक वेल था, जिसके नियंत्रण में नीचे की कृषि भूमि थी।

चेर, पाण्ड्य और चोल नामक तीन प्रमुख वंशों का प्रतिनिधित्व करने वाला 'वेन्तार' समूह राजनैतिक सत्ता का दूसरा वर्ग है। इन तीनों को कविताओं में मुवेन्तार अथवा मुवार नाम से भी जाना जाता है। कविताओं में ही यह भी वर्णित है कि उनके केन्द्रीय क्षेत्र क्रमशः करूर, मदुराई और उरऐमूर थे तथा परिसीमा के सामरिक स्थल क्रमशः मुचिरी, कोरकाई और पुहार थे। समुद्र के पश्चिमी घाट के कुरिन्जी क्षेत्र चेरों के नियंत्रण में थे। इसी तरह तमिलकम का दक्षिणी केन्द्रीय क्षेत्र का मूल्लई, पलाई और नेइतल भू-भाग पाण्ड्यों के नियंत्रण में था तथा मारूतम नरीवाला घाटी क्षेत्र जो कावेरी के नाम से जाना जाता था, चोलों के कब्जे में था। उस काल में भूमियों के सीमांकन की कोई स्पष्ट धारणा विकसित नहीं हुई थी और कविताओं से भी यह जानकारी नहीं प्राप्त होती कि प्रत्येक के अधिकार में वास्तव में कितना क्षेत्र था। बाहरी सीमा तक पहुँचना अधीनस्थ प्रमुखों के अधीन था। सीमा से बाहर इनका प्रभाव कम हो जाता था या फिर घटता-बढ़ता रहता था।

कविताओं में उनके पारिस्थितिकीय क्षेत्रों के अनुसार चेरों को 'कनक नातन', जिसका अर्थ होता है नातुवन प्रमुख अथवा 'मलाईयन' जिसका अर्थ होता है मलाई, पहाड़ी प्रमुख भी कहा गया है। एक कवि ने अपनी भावना को व्यक्त करते हुए 'चेरामन कोटाई मारपन' की प्रशंसा में एक कविता की रचना की, जिसमें वह यह जानने को उत्सुक है कि प्रमुख को वास्तव में किस प्रकार सम्बोधित किया जाए। उसके पास 'मारूतम प्रदेश' होने के कारण उसे 'नातन' कहा जाए, या उसके पास 'कुरिन्जी' प्रदेश होने के कारण उसे 'उरा' कहा जाए या फिर उसके पास तटीय प्रदेश होने के कारण 'चेरापन' कहा जाए। इन बातों से इस तथ्य का पता चलता है कि चेरों का क्षेत्र अनेक पारिस्थितिकीय क्षेत्रों का मिश्रित रूप था, जहाँ पहाड़ और वन अधिक मात्रा में पाए जाते थे। इसी कारण चेरों का संसाधन आधार भी विविधतापूर्ण था और वन सम्पत्ति मुख्य संसाधन थे। इसी तरह एक कविता में चेरन चेंकुट्टुवन के पहाड़ी उत्पाद (मलाईतरम) तथा समुद्रीय उत्पाद (कट-अरर्अरम) और स्वर्ण का वर्णन है, जो नौकाओं द्वारा तटों पर लाया जाता था। पाण्ड्यों का भू-भाग भी मिश्रित पारिस्थितिकीय क्षेत्र था, जिसके अधिकांश भागों में चरागाह तथा तटीय भू-भाग था। एक पाण्ड्य समूह का प्रमुख स्वयं को अनेक संसाधनों के देश (यानार मय्यार कोमान) का प्रमुख मानता था। चोल जो कविताओं में 'काविरि किलामन' के नाम से जाना जाता है, की भूमि 'कावेरी' के मुहाने डेल्टा में थी और यह भूमि धान और गन्ने से सम्पन्न थी।

'वेन्तार' श्रेणी के जो प्रमुख थे, वे संसाधनों को भेंटों और भुगतान के रूप में प्राप्त करते थे। ऐसी मान्यता है कि प्रारम्भ में वसूली का तरीका लूटपाट था। अधीनीकरण की प्रक्रिया में ऐसा प्रतीत होता है कि तीन विभिन्न प्रक्रियाओं को प्रयोग में लाया जाता